IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
IJARSCT
Impact Factor: 6.252
Volume 2, Issue 2, December 2022

मध्य प्रदेश में भ्रष्टाचार : लोकायुक्त की भूमिका

डॉ. ऋषि कुमार द्विवेदी

प्राचार्य, स्वामी नीलकण्ठ विधि महाविद्यालय, मैहर, जिला–सतना (म.प्र.)

शोध–साराँशः

अधिकार एवं शक्तियाँ सुशासन को जन्म देती है परन्तु सम्पूर्ण अधिकार एवं अपरिभाषित शक्तियाँ भ्रष्टाचार को जन्म देती हैं, जिसके फलस्वरूप निरंकुशता तानाशाही व भ्रष्टाचारी संस्थायें जन्म लेती हैं अतः इन पर प्रभावी एवं कारगर नियंत्रण परम आवश्यक है। प्रशासनिक प्राधिकारियों को जो विवेकाधिकार व विशेषाधिकार विधियों के अन्तर्गत दिया गया है उससे भ्रष्टाचार के अवसर अधिक उत्पन्न होते हैं क्योंकि उन पर न तो प्रभावी नियंत्रण प्रशासन का होता है और न ही प्रभावी निरीक्षण। चूँकि पिछले दशक से भ्रष्टाचार के काफी मामले प्रकाश में आये हैं जिसमें सत्ता दुरुपयोग व भ्रष्टाचार के मामले में वृद्धि हुई है, इस कारण भ्रष्टाचार पर नियंत्रण हेतु, इसकी आवश्यकता अपरिहार्य हो गई है।

मुख्य शब्दः लोकायुक्त, शक्तियाँ, सुशासन, भ्रष्टाचार, प्रशासन, नियंत्रण आदि।

प्रस्तावनाः

20वीं शताब्दी में लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा ने सरकारी कृत्यों में अभूतपूर्व वृद्धि की है। सामाजिक सेवाओं तथा अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सरकार को ही एक सबल अभिकरण पाया गया है जिसके फलस्वरूप सरकार का मानवीय जीवन के प्रत्येक पहलुओं पर अनावश्यक हस्तक्षेप बऩने लगा और लोगों की शिकायतें शासकीय प्राधिकारियों के विरुद्ध बढ़ने लगी हैं। प्रशासनिक प्राधिकारियों के विरुद्ध शिकायत करने की वर्तमान प्रक्रियाओं की अपर्याप्ता के कारण ही स्कैण्डनेवियाई देश में ''ओम्बड्समैन'' नामक एक लोकप्रिय संस्था का प्रादुर्भाव हुआ है।

''ओम्बड्समैन'' का अर्थ है सार्वजनिक डियूटी पर तैनात एक सॉलिसिटर। इसे सर्वप्रथम स्वीडन ने अपनाया था। स्वीडन में सामान्य नागरिकों की शिकायतों को दूर करने के लिए संसद द्वारा इसकी नियुक्त की गई। वर्ष 1809 में स्वीडन द्वारा इसे अपनाने के बाद फिनलैंड, नार्वे, डेनमार्क आदि देशों ने भी इसे अपनाया। न्यूजीलैंड जो कि एक संसदीय प्रणाली वाला देश है ने इस व्यवस्था को वर्ष 1962 व ब्रिटेन ने इसे वर्ष 1966 में अपनाया है।

भारत देश में भ्रष्टाचार से निपटने हेतु इस प्रकार की संस्थाओं की महति आवश्यकता हुई है। इस हेतु अगस्त 1962 में नई दिल्ली में तृतीय अखिल भारतीय विधि सम्मेलन द्वारा आयोजित ''ओम्बड्समैन'' संबंधी विचार गोष्ठी और अक्टूबर 1963 में मद्रास प्रार्मिवंसियल बार ऐसोसिएशन द्वारा ''ओम्बड्समैन'' की स्थापना की सिफारिश की गई। अन्य देशों की पुनरीक्षण करने के बाद प्रशासनिक सुधार आयोग (ARC) ने सिफारिश की है कि ''हमारे देश की विशिष्ट परिस्थितियों में लोगों की शिकयतों को दूर करने के लिए दो विशेष संस्था होने चाहिए पहली केन्द्र में और दूसरी राज्यों में जो मंत्रियों, सचिवों एवं अधीनस्थों द्वारा की गई कार्यवाहियों के विरूद्ध शिकयतों की जाँच कर सकें। ऐसे प्राधिकरण विधायिका कार्यपालिका व न्यायपालिका से मुक्त हो''

म.प्र. में आम जनता को प्रशासनिक प्राधिकारियों के पद व अधिकारों के दुरूपयोग से बचाने के लिये इनकी शिकायतों क निवारण तंत्र का प्रावधान एक अनिवार्यता बन गई थी। इसको महसूस करते हुये राज्य में लोकायुक्त प्रणाली स्थापित ही नहीं की गई, अपितु संशोधनों द्वारा उसे सशक्त भी बनाया गया है, यद्यपि अभी इस दिशा में गंभीर कमियां है। प्रजातंत्र तभी सार्थक

बनता है जब प्रजा की प्रशासन से संबंधित शिकायतों को सुनने व उसका निराकरण करने को प्रभावी, स्वतंत्र एवं सक्रिय एजेन्सी हो।

एतद् शोध का मुख्य उद्‌देश्य भ्रष्टाचार एंव सत्ता दुरूपयोग से सम्बद्ध विभिन्न गतिविधियों, कार्यों, संव्यवहारों, आचरणों व नीतियों को ज्ञात करना तथा उनके सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक व मूल्यजनित प्रभावों तथा परिणामों का आंकलन करना है साथ ही साथ उपरोक्त गतिविधियों पर प्रभावी नियंत्रण, परिसीमन के उद्‌देश्य, नीतियों, कार्यक्रमों में सुधार करना एवं क्रियाविधि का अन्वेषण कर सुझाव प्रस्तुत करना है।

शोध विधिः

किसी विषय का गहन व सूक्ष्म अध्ययन करके विषय के संबंध में कुछ नवीन तथ्यों की खोज करना शोध कहलाता है। अंग्रेजी में शोध को रिसर्च कहाँ जाता है यह दो शब्दों से मिलकर बना है। Re + Search जिसमें Re का अर्थ पुनः और दूसरे शब्दों में अर्थात् Search का अर्थ है खोज करना। अतः शोध का अर्थ गहन तथा पुनः अध्ययन करने के उपरान्त नवीन तथ्यों की खोज करना है। यह एक प्रकार से सावधानी पूर्वक किया गया अन्वेषण या जाँच–पड़ताल करके शोधार्थी द्वारा अपने कार्य को क्रमबद्ध तरीके से करके उससे एक नये अन्वेषणात्मक विषय के प्रति नवीनता को प्राप्त करने की चेष्टा करता है। इस तरह से प्राप्त परिणाम को शोध कहा जाता है। इसे निम्नलिखित रूप से जानने का प्रयास किया गया है।

'ओम्बुड्समैन' संस्था की उत्पत्ति के विषय में विभिन्न विद्वानों ने भिन्न–भिन्न प्रकार के विचार प्रकट किये हैं। जैसे कि आस्ट्रेलियाई विद्वान ''ज्योफ्री सावर'' के अनुसार– 'ओम्बुड्समैन' संस्था की उत्पत्ति प्राचीन ''ग्रीक एवं रोमन'' शब्द साम्राज्य के ''सेन्सर एवं ट्रिब्यून' संस्था के अन्तर्गत रखी जा सकती है।[1] तदुपरान्त उक्त विचार के सन्दर्भ में दिये गये शोध कार्यों के द्वारा उक्त तथ्यों की पुष्टि नहीं हुई, जिससे स्वतः स्पष्ट हो जाता है कि 'सावर' में रोमन रिपब्लिक की जिस ट्रिब्यून संस्था के संबंध में ओम्बुड्समैन संस्था की उत्पत्ति की विचारधारा कही है, उसे अधिक से अधिक 'अर्द्ध ओम्बुड्समैन' की संज्ञा दी जा सकती है। वास्तविक रूप में रोमन साम्राज्यकाल में ही इस संस्था मेडीटेरेनियन क्षेत्र से भी लुप्त हो गयी। कोई ऐसा प्रमाण अब तक नहीं मिल पाया है कि जिससे यह स्पष्ट किया जा सके कि वर्तमान ओम्बुड्समैन संस्था रोमन साम्राज्य के 'सेन्सर एवं ट्रिब्यून' संस्था की परम्परा में विकसित संस्था का रूप है।[2] वर्तमान में ओम्बुड्समैन संस्था की उत्पत्ति का मुख्य स्त्रोत 1713 ई0 में स्वीडन के उस राजकीय आज्ञा–पत्र से प्राप्त किया जा सकता है, जिसके द्वारा स्वीडन के तत्कालीन राजा 'चार्ल्स बारहवें' ने एक ऐसे अधिकारी की नियुक्ति की, जिसका राजा 'होगेस्टा ओम्बुड्समैन' (राजा का सर्वोच्च ओम्बुड्समैन) था; और राजा के अधिकारियों के विरूद्ध जाँच कर सकता था।[3] कुछ वर्षों के बाद सन् 1917 में इस अधिकारी का नाम बदल कर ''चांसलर ऑफ जस्टिस'' रख दिया गया। चार्ल्स बारहवें की मृत्यु के बाद शासन सत्ता में राजा के हाथों से पार्लियामेन्ट (संसद) के हाथों में चली गयी, लेकिन तब भी ''चांसलर ऑफ जस्टिस'' औपचारिक ही माना जाता था और विशेषतः 1866 ई0 के बाद तो वह वस्तुतः ''रिक्सडेग का ओम्बुड्समैन'' बन गया था।

सन् 1809 में जब स्वीडन का संविधान बना तो उसमें पहले से ही यह प्रावधान किया गया था कि देश में ओम्बुड्समैन नाम का एक अधिकारी नियुक्त किया जायेगा, जिसका कार्य आम आदमी की शिकायतों के आधार पर प्रशासनिक आयोग्यता के लिए दोषी ठहराये गये, सरकारी अधिकारियों के सम्बन्ध में जाँच करना था।[4] संसद द्वारा नियुक्ति यह अधिकारी 'जस्टिशाई ओम्बुड्समैन' (कमिश्नर ऑ जस्टिस) के नाम से जाना जाने लगा। वेसे तो वर्तमान में 'चांसलर ऑफ जस्टिस' का पद विद्यमान है, एवं उसे अन्य महत्वपूर्ण कार्य आवांटित किये है, लेकिन जहाँ तक जनता की शिकायतों को प्राप्त करने का व उसके संबंध में जाँच करने का सवाल है तो 'जस्टिशाई ओम्बुड्समैन' चांसलर ऑफ जस्टिस की तुलता में अत्यधिक महत्वपूर्ण हो गया है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि विश्व में सबसे पहले सन् 1809 ई0 में स्वीडन में पार्लियामेन्ट की ओर से प्रशासन पर पर्यवेक्षण हेतु एक पद का सृजन किया गया था, जिसका नाम था 'ओम्बुड्समैन'।[5] यह स्वीडिश भाषा का शब्द है और जिसका अर्थ है 'ऐसा व्यक्ति जो किसी अन्य व्यक्ति की ओर से प्रवक्ता अथवा प्रतिनिधि का काम करे'।[6] ओम्बुड्समैन के पास आम आदमी की जो शिकायतें प्रशासनिक अन्याय व प्रशासन द्वारा परेशान किये जाने को आए। उनके बारे में वह शिकायतकर्ता की ओर से प्रशासन के सामने उसके प्रवक्ता की तरह कार्य करता था। ऐसा तो एक वकील भी अपने आवेदक की बात को न्यायालय के सामने रखता है लेकिन ओम्बुड्समैन की स्थिति मौलिक रूप से वकील से अलग है। न्यायालय के सामने उसी पर जोर देगा और उसके पक्ष में निर्णय कराने का पूरा प्रयास करेगा। इसके विपरीत ओम्बुड्समैन अपने शिकायतकर्ता की बात को उसका प्रवक्ता बनकर प्रशासन तक पहुँचायेगा, किन्तु उसके पश्चात् वह प्रशासन का स्पष्टीकरण सुनकर यह देखेगा कि दोनों में से किस की बात कितनी सही है और उसके अनुसार कार्यवाही करेगा। इस प्रकार ओम्बुड्समैन की स्थिति वकील जैसी न होकर मध्यस्थ जैसी है।

लोकायुक्त के कार्य

मध्यप्रदेश भारत वर्ष का जनसंख्या की दृष्टि से तीसरा बडा राज्य है। यहाँ देश की 7.4 करोड़ निवास करती है। एक ओर प्राकृतिक एवं सांस्कृति संसाधनों की अपूर्व छटा यहाँ की विशेषता है, तो दूसरी ओर लोकशक्ति का भी विशेष रूप यहाँ दिखाई पड़ता है। यहाँ के प्रशासकों का कार्यभार अपने आप में अलग स्थान एवं महत्व रखता है। अद्यावधि के नाम पर यहाँ बहुत ही अधिक धोखाधड़ी है। शोषण के प्रवृत्ति सर्वत्र दीख पड़ती है। अधिकांश अधिकारी एवं कर्मचारी निजी लाभ के निमित्त ऐसे कार्यो के क्रियान्वयन में सलिप्त हैं, जो मुख्य रूप से उनके तुच्छ सलाह के कारण सहज सामाजिकों का कितना भारी नुकासान हो रहा है। भ्रष्टाचार लोगों के आचरण में व्याप्त है। यह आर्थिक समृद्धि एवं सम्पन्नता का उद्बोधक हो चला है। जिस पद पर आसीन व्यक्ति न्यूनतन कार्य करके अधिकतम अर्थोपार्जन करने का अवसर प्राप्त करता है, उस पद को उतना ही श्रेष्ठ माना जाता है तथा उसे ही सर्वोपरि महत्ता प्रदान की जाती है। जिसके द्वारा जितनी अधिक मात्रा में शक्ति और सम्पदा संचित की गई हों। साधन– सम्पति – सम्बन्धिनी श्रध्दा के पात्र बने सामाजिकों के विशिष्ट रूप रेखा का सर्वाग विश्लेषण यदि किया जा सकता है तो वह मात्र लोकायुक्त संस्थाओं के द्वारा ही सम्भव है।

लोकायुक्त संस्थाएँ भ्रष्टाचार में संलिप्त पात्रों की दशा का अध्ययन कर उन्हें यथाशीघ्र दण्ड दिलाने के लिए न्याय पालिका से सिफारिश करने का कार्य करती है। इन संस्थाओं के अन्तर्गत ऐसे भावों का सुनियोजन होता है जो व्यापक स्तर पर समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार को जड़ से उखाड़ कर जड़ से समूल नष्ट कर सके तथा आम जन की अपेक्षाओं के अनुरुप यथा शीघ्र भ्रष्टाचारियों को दण्ड दिलाने का विधान करते हुए भ्रष्टाचार के कार्य का समापन कर सकती है। यद्यपि वर्तमान समय में मध्यप्रदेश में कार्यरत लोकायुक्त संस्थाएँ आम आदमी के अनुरूप तात्कालिक अपने कार्य को अंजाम देने में अक्षम प्रतीत हो रही है। इनकी अक्षमता का कारण न तो इनकी कमजोरी है और न ही इनकी अपने कार्य के प्रति कोई उदासीनता है, बल्कि इसका मूलभूत कारण यह है कि इन्हें इतना अधिकार नहीं प्राप्त है कि ये समाज में व्याप्त बुराईयों का खुलकर सामना कर सकें तथा उनके उपयुक्त समाधान प्रस्तुत कर सकें।

वर्तमान लोकतान्त्रिक गणराज्य की अनेक संस्थाएँ तथा उनके कार्य, व्यापार लोकायुक्त संस्थाओं के कार्य क्षेत्र में नहीं आते, जिसकी वजह से भ्रष्टाचार कम होने का नाम नहीं ले रहा है। उदाहरण स्वरूप भारतीय विश्वविद्यालयों की शिक्षा प्रणाली व ग्राम पंचायतों में ग्राम सरपंचों के अधिकारों एवं कर्तव्यों को इसके अन्तर्गत अभिव्यक्त किया जा सकता है आज भ्रष्टाचार का व्यापक और विस्तृत रूप शिक्षा जगत में विद्यमान है। न तो शिक्षक अपने दायित्वों का पूर्ण निर्वहन करना चाहता है और न ही शिक्षार्थी स्वंय द्वारा अर्जित प्रमाण पत्रों के अनुरूप ज्ञान का कोश संचित करना चाहता है। ऐसे में शिक्षा का भ्रष्ट नीतियों का

बजारी करण हो चला है। जिसमें प्रमाण पत्रों की खरीददारी और उसकी बिक्री सर्वोपरि है। इतना ही ग्राम पंचायतों के लाकनायक, ग्राम सरपंचों के द्वारा मनरेगा योजना के व्यवस्थिति सुसंचालन की प्रवृत्ति को भ्रष्टाचार की चरम अवस्था में देखा जा सकता है।

आज शासन द्वारा भरी मात्रा में धन ऐसी परियोजना में निवेशित किया जा रहा है परन्तु उस धन का सही उपयोग न तो जनता कर पा रही है और न ही सरकारी संस्थाएँ ही। उस धन के सदोपयोग में कार्यरत बिचौलिए उस नियोजित योजना के अधिकांश भाग को निगल जा रहे हैं। फिर भी लोकायुक्त संस्थाएँ न तो किसी भ्रष्टाचारी को अभियुक्त के रूप में भारतीय न्यायपालिका के कटघरे में खड़ा करवा पा रही हैं और न ही उन्हें दण्ड दे पा रही है। उनकी इस कमजोरी के पीछे देश के भ्रष्टाचारियों के बड़े समूहों का हाथ है। प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से सब एक दूसरे से जुडे हैं। तथा सबकों बचाने में एक दूसरे की मदद करते हैं तथा बेईमानी का अवसर भी प्रदान करते हैं। यदि इन नैतिक विकारों की भ्रष्टाचारी मानसिकता को मध्य प्रदेश की कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका की रगों में दौड़ रहे सामविधिक मंत्रणाओं से विलग करना है, तो इसके लिए या तो धर्म शिक्षा के द्वारा सबको नैतिक बनाया जाय अथवा दण्ड का विधान करके सबके मन में एक भय पैदा किया जाय। वर्तमान परिवेश में सम्पूर्ण जनता को संस्कार की शिक्षा देकर नैतिक मूल्यों से ओत–प्रोत करना तो सम्भव प्रतीत नहीं होता है । हाँ इतना जरूर है यदि दण्ड के विधान से सबके अन्तःकरण में एक भय को स्थापित कर दिया जाय तो उनके द्वारा किसी भी भ्रष्टाचार में संलिप्त होने में वे डरेंगे। फलतः देश और समाज की सुरक्षा व संरक्षा विशिष्ट रूप में हो सकेगी।

लोकायुक्त के अन्वेषण की पद्धति

लोकपाल को अन्वेषण के दौरान गवाहों को बुलाने एवं अभिलेख आदि एकत्र करने के सम्बन्ध में न्यायलय के समान अधिकार प्राप्त होंगे। लोकपाल सरकार से या उसे अधीनस्थ अधिकारियों से मामले में सम्बन्धित कोई भी सूचना या अभिलेख प्राप्त कर सकता है और वह सभी विभागों, विदेशों सम्बन्धों और राज्य की सुरक्षा पर पड़ने वाले भावों की स्थिति को छोड़कर वांछित सामग्री देने को बाध्य होंगे। लोकपाल द्वारा किये गये सभी अन्वेषण निजी रूप से सम्पादित होंगें। लोकपाल के अन्वेषण के दौरान उससे सम्बन्धित कोई भी सूचना किसी कारणवश प्रकाशित नहीं की जायेगी, जब तक कि उसका निष्कर्ष प्रतिवादी या विधानसभा को प्रकाशन तब तक लम्बित रखा जायेगा। तब कि मामला तदर्थ या वार्षिक प्रतिवेदनों में लोकपाल द्वारा सम्बन्धित नियमों के अनुसार सम्मिलित न कर लिया जाये। (1) (क) दिल्ली सहकारी सोसाइटी अधिनियम, 1972 के अधीन गठित या रजिस्ट्रीकृत शीर्षस्थ सहकारी सोसाइटी या कोई सहकारी सोसाइटी जो सरकार के नियंत्रण के अधीन है। सिविल सेवक सरकारी सेवक से भिन्न अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, प्रबन्ध निदेशक का निदेशक बोर्ड के सदस्य (कोई भी नाम से कहा जाए) के सम्बन्ध में–क. दिल्ली सहकारी सोसाइटी अधिनियम, 1972 अधीन गठित या राजिस्ट्रीकृत शीर्षस्थ सहकारी सोसाइटी या कोई सहकारी सोसाइटी, जो सरकार के नियंत्रण के अधीन है। ख. कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 617 के अर्थान्तर्गत सरकारी क्रियाकलाप कर रही है या इसके नियंत्राधीन है। ग. दिल्ली से सम्बन्धित किसी विधि के अधीन स्थापित स्थानीय प्राधिकारी (संविधान की सातवीं अनुसूची की राज्य की प्रविष्टि सं. 18 से सम्बन्धित अनियमित समिति के अधीन गणित (स्थानीय प्राधिकारी के अलावा) घ. सरकार के क्रियाकलाप से सन्नध्द और इसके नियंत्रणाधीन निगम। ङ. सरकार द्वारा गठित कोई आयोग या निकाय जिसका स्वामित्व या नियंत्रण सरकार का है, की बाबत सिविल सेवक/ सरकारी सेवक के अलावा अध्यक्ष, उपाध्यक्ष या प्रबन्ध निदेशक या निदेशक मण्डल का सदस्य।

परिवाद –मुख्यमंत्री, मंत्री या विधायक के विरूध्द परिवाद इसकी अन्तर्वस्तु के समर्थन में प्रारूप 3 में शपथपत्र के साथ प्रारूप 1 में होगा। अन्य कृत्यकारियों के विरूध्द परिवाद इसकी अंतर्वस्तु के समर्थन में प्रारूप 3 में शपथपत्र के साथ प्रारूप 2 में होगा।

परिवाद लोकायुक्त के रजिस्टर या लोकायुक्त द्वारा प्राधिकृत किसी अन्य अधिकारी को प्रस्तुत किया जा सकता है।

फीस– परिवाद फाइल करने के लिए फीस के रूप में न्यायिक स्टाम्प पाँच सौ रूपये संदत्त करना होगा।

शपथपत्र– शपथपत्रों का शपथ लोकायुक्त के रजिस्ट्रार या लोकायुक्त के अधीनस्थ किसी अन्य राजपत्रित अधिकारी किसी विधि के अधीन पहले से ही सशक्त प्राधिकारी जिनके समक्ष शपथ लिया जा सकता है के अलावा इस बाबत उसके द्वारा प्राधिकृत आधिकारी के समक्ष किया जा सकता है।

इन नियमों से पूर्व फाइल परिवाद– इन नियमों के परिवर्तन से पूर्व फाइल परिवाद को इन नियमों के अधीन फाइल किया गया समझा जाएगा। यदि परिवादी वाद में नियम 6 और 7 के उपबन्धों का पालन करता है।

विभाग के सचिव द्वारा नोटिस दिया जाना– विभाग से सचिव को अधिनियम की धारा 14 की उपधारा (3) के अधीन लोकायुक्त या को लिखित में नोटिस देने का प्रधिकार होगा।

दण्ड प्रक्रिया संहिता का लागू होगा– दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 340 की उपधारा (1) में विहित प्रक्रिया का पालन उक्त संहिता की धारा 195 की उपधारा(1) के खण्ड(ख) में निर्दिष्ट अपराधों की बाबत किया जाएगा और उक्त संहिता की धारा 340 के अधीन किए गय परिवाद पर लोकायुक्त के ऐसे अधिकारी द्वारा हस्ताक्षर किया जाएगा, जिसे वह इस प्रयोजन के नियुक्त करें।

लोकायुक्त द्वारा पारित आदेशों का अधिप्रमाणन– इन नियमों के उपबन्धों के अधीन लोकायुक्त या क्षरा पारित और लोकायुक्त या के नाम से निष्पादित किसी आदेश का अधिप्रमाणन ऐसी रीति से किया जाएगा जैसा लोकायुक्त या उपलोकायुक्त साधारण या विशेष आदेश द्वारा समय पर विनिर्दिष्ट करें।

कार्यवार का संव्यवहार– लोकायुक्त समय पर साधारण या विशेष द्वारा इन नियमों के प्रशासन के उद्भूत कार्यवार के सुविधाजनक और कुशल संव्यवहार का उपबन्ध कर सकता है और प्रयोजन के लिए प्रक्रिया का अनुपालन किया जाएगा। परन्तु सेना आदेश ऐसा मामला के वर्ग का भी विनिर्देश करेगा, जो किसी आदेश को जारी करने के पूर्व लोकायुक्त या व्यक्तिगत जानकारी में लाया जाए।

अवशिष्ट शक्तियाँ– इन नियमों में उपबन्धित न किये गये विनिर्दिष्ट सभी मामलों , चाहें इन नियमों के उपबन्धों के प्रासंगिक या अनुवांशिक या अन्यथा हो, का विनियम ऐसे आदेशों के अनुरूप किया जाएगा। जैसा लोकायुक्त समय–समय पर बनाए।

कार्यवाहियों और अन्वेषण को विनियमित करने की शक्तियाँ– लोकायुक्त या उपलोकायुक्त का अधिनियम के उपबन्धों के अध्यधीन रहते हुए इन नियमों में उपबन्ध न किए गए सभी मामलों में अन्वेषण और जाँच तथा कार्यवाहियों के संचालन को विनियमित करने की शक्तियों करने की शक्तियाँ होगी।

अन्वेषण में अपनाएँ जाने वाली प्रक्रिया– जब लोकायुक्त या उपलोकायुक्त अधिनियम के अधीन अन्वेषण करता है, तो वह सम्बध्द लोक कृत्यवादी को परिवाद के प्रति या अन्वेषण के आधारों का कथन की तामीली के पश्चात् उसे या उसके प्राधिकृत प्रतिनिधि को निरीक्षण करने का युक्तियुक्त अवसर प्रदान करेगा या परिवाद के शपथपत्र या अन्य दस्तावेजों के प्रति उपलब्ध कराएगा जो ऐसे परिवाद, शपथपत्र या कथन के समर्थन में फाइल किये गये हैं।

डब्लू. ए. रॉबसन (W.A. Robson) के अनुसार ''आम नागरिक यह सोचता है कि नौकरशाही अभी भी परम्परा बुराइयों से मुक्त नहीं हुई। अधिकारियों में खुद को बहुत बड़ा समझने की प्रवृत्ति होती है या वे अपने पद के नाजायज बातों के बारे में ऐसा सोचते हैं। नागरिकों की सुविधाओं और भावनाओं के प्रति बिल्कुल उदासीन होते हैं। कायदे–कानून और औपचारिकताओं का पालन वे एक ही हद तक करते हैं। लोकतांत्रिक प्रक्रिया में शासकों और लोगों के बीच जो सम्बन्ध होने चाहिए, वे उन्हें नहीं समझ पातें। अगर प्रशासन के प्रति नागरिकों के असंतोष को दूर करने के प्रयास नहीं किये गये तो इससे समाज में व्याप्त तनाव और अव्यवस्था और बढ़ जाएगी। इसके विकास की गतिविधियों में नागरिकों का सहयोग भी नहीं मिल सकेगा। इन सब बातों का ध्यान में रखते हुए, सरकार हर स्तर पर नागरिकों की शिकायतें दूर करने का प्रयास कर रही है।

प्रशासनिक सुधार आयोग ने नागरिकों की शिकायतें दूर करने बारे में अपनी अन्तरिम रिपोर्ट में कहा है कि अगर देश की शक्ति उसकी समृद्धि में निहित है तो लोकतंत्र की सुरक्षा और स्थिरता नागरिकों के संतुष्ट होने पर ही निर्भर करती है।

प्रत्येक वर्ष के प्रारम्भ में लोकपाल सम्बन्धित संसद/विधान मण्डल को गत वर्ष में उसके द्वारा की गयी कार्यवाहियों से सम्बन्धित एक रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा। इसमें उसके द्वारा निपटाये गये मामलों के सारांश के अतिरिक्त प्रशासन के वर्तमान कानूनों में यदि कोई संशोधन किया जाना अपेक्षित हो तो उसका भी उल्लेख किया जायेगा।

इस प्रकार प्रशासनिक सुधार आयोग ने अपनी अन्तरिम रिपोर्ट के साथ लोकपाल विधेयक, 1966 का एक प्रारूप विधेयक भी सरकार के विचारार्थ संलग्न कर प्रस्तुत किया।

संसद सदस्य डॉ. पी. के. देव द्वारा नवम्बर 16, 1967 को आयोग के प्रारूप विधेयक 1966 के आधार पर एक निजी विधेयक पेश किया गया, जो कि प्रारम्भिक स्वीकृति के लिए अध्यक्ष (मंत्रीमण्डल) के पास भेजा गया, क्योंकि इसमें कई वित्तीय आपत्तियाँ थी। इसमें किसी प्रकार की कार्यवाही नहीं की गयी। दिसम्बर 1, 1967 में डॉ. देव द्वारा पुनः प्रश्न उठाया गया, जिस पर सरकार ने जवाब प्रस्तुत किया कि कुछ राज्य इस योजना से सहमत नहीं है विधेयक को जनप्रतिनिधियों की राय जानने के लिए परिचालित किया गया।

मई 9, 1968 के मध्य में सरकार ने '' लोकपाल और लोकायुक्त'' विधेयक प्रस्तुत किया जो कि दोनों सदनों की संयुक्त प्रवर समिति को निदिष्ट किया गया था। मार्च 21, 1969 में संयुक्त प्रवर समिति ने कुछ संशोधनों के साथ अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। तत्पश्चात् संशोधन विधेयक ''लोकपाल और लोकायुक्त'' विधेयक 1969 लोकसभा में पुनः प्रस्तुत किया गया। 20 अगस्त 1969 में लोकसभा में यह विधेयक पारित कर दिया गया, लेकिन राज्य सभा के विचारार्थ लाम्बित था दिसम्बर 27, 1970 में राष्ट्रपति द्वारा चौथी लोकसभा विघटित किये जाने के कारण यह विधेयक स्वतः रद्द हो गया।

विधेयक ने भारत में केन्दीय प्रशासन में दो स्तरों पर ओमबुड्समैन की अवधारणा को प्रस्तुत किया। विधेयक के प्रावधानों के अनुसार लोकपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा उच्चतम न्यायाल के मुख्य न्यायाधीश व विपक्ष के नेता की सलाह पर की जायेगी। विपक्ष के नेता की सलाह का प्रावधान विपक्ष का विश्वास हासिल करने के लिए किया गया था।

यह विषय विचार करने योग्य है कि ''लोकपाल और लोकायुक्त'' विधेयक 1996 केवल केन्द्र सरकार के लिए ओमबुड्समैन की भाँति कार्यप्रणाली उपलब्ध कराता है, क्योंकि इस विधेयक का क्षेत्र राज्य के मंत्रियों और जन प्रतिनिधियों तक विस्तृत नहीं था। जबकि आयोग के प्रस्तवों में यह सब सम्मिलित थे। इस परिवर्तन का मुख्य कारण कुछ राज्यों द्वारा आयोग के प्रस्तावों को स्वीकार न करना था यह विचारणीय है कि उस समय के 17 राज्यों में 7 राज्यों ने[4] आयोग के प्रस्तावों को अपनी सहमति नहीं दी थी और 5 राज्यों [5] ने केन्द्र सरकार द्वारा किये गये पत्राचार क कोई भी उत्तर ही नहीं दिया। 2 केन्द्र शासित राज्यों ने भी आयोग के प्रस्तावों में अपनी सहमति नहीं दी। आखिर इसके पीछे कौन सी परिस्थितियाँ थी? जिनके कारण राज्यों ने आयोग के प्रस्तावों को नहीं माना, उन परिस्थितियों का जानना आवश्यक है।[6]

लोक आयुक्त प्रशासन में प्राप्त होने वाले परिवादों का परीक्षण सर्वप्रथम अधिनियम की धारा 9 के अन्तर्गत दिये गये उपबन्धों के अधीन इस आशय से किया जाता है कि क्षेत्राधिकार, अपेक्षित शपथ पत्र, संगत साक्ष्य आदि अधिनियमानुकूल प्रस्तुत किये गये हैं अथवा नहीं। तत्पश्चात परिवाद अनुलग्नकों सहित तीन प्रतियों में निर्धारित प्रपत्र पर है या नहीं यह जाँचने के पश्चात ही अग्रेत्तर कार्यवाही प्रारम्भ की जाती है।

शिकायत रूपी परिवादों के सम्बन्ध में सर्वप्रथम विभाग अथवा सम्बधित लोकसेवक जिससे सम्बन्धित शिकायत प्राप्त हुई है को परिवाद की प्रति प्रेषित करके परिवादी द्वारा प्रस्तुत, परिवादित तथ्यों पर स्पष्टीकरण प्राप्त किया जाता है। स्पष्टीकरण नियत अवधि में प्राप्त न होने पर पुनः समय देकर अनुस्मारक पत्र जारी किया जाता है। इसके पश्चात भी स्पष्टीकरण प्राप्त न होने पर अधिनियम की धारा 11(1) के अन्तर्गत सम्बन्धित लोक सेवक को व्यक्तिगत रूप से सम्बन्धित अभिलेखों सहित उपस्थित

होने हेतु सम्मन भेजा जाता है, तदोपरानत आवश्यकतानुसार जमानती/गैर जमानती वारण्ट लोक सेवक की उपस्थिति सुनिश्चित कराये जाने हेतु प्रयोग किये जाते हैं।

जन सामान्य अपनी शिकायत का परिणाम शीघ्र चाहता है। उसकी इच्छा होती है कि भ्रष्टाचारी दण्डित हो, जबकि लोक आयुक्त अधिनियम में दण्ड देने का अधिकार नहीं है, लोक आयुक्त केवल संस्तुति करता है। वह जब कोई संस्तुति सक्षम अधिकारी को भेजता है तो उसमें लोक सेवक के विरूद्ध अनुशासनिक जाँच करके दण्ड दिये जाने अथवा अभियोजन चलाये जाने की सिफारिश होती है। फलतः वर्षो तक परिणाम सामने नहीं आते। इसी प्रकार की कठिनाईयाँ अनुशासनिक जाँचों में सामने आती हैं जहाँ पर जनता का विश्वास कम होता जा रहा है। आम नागरिक यह नहीं समझता कि लोक आयुक्त का क्षेत्राधिकार वहीं समाप्त हो गया जहाँ संस्तुति कर दी गयी। आम नागरिक तो परिणाम चाहता है। कभी–कभी जैसे ही लोक आयुक्त किसी भ्रष्टाचारी लोक सेवक के प्रति संज्ञान लेता है तो शासन द्वारा यह सूचित कर दिया जाता है कि उस विषय में सतर्कता जाँच लम्बित है लेकिन सतर्कता जाँच पूर्ण होने की अवधि असीमित है।[7]

सम्बन्धित लोक सेवक से प्राप्त स्पष्टीकरण को परीक्षण के पश्चात आवश्यकतानुसार प्रत्युत्तर प्राप्त करने हेतु परिवादी को प्रेषित किया जाता है। उक्त कार्यवाही के पश्चात, प्राप्त तथ्यों के आधार पर विचारोपरान्त व्यथित व्यक्ति की यथोचित पाये जाने वाली शिकायत के सम्बन्ध में राहत दिलाने हेतु कार्यवाही सुनिश्चित करने के लिये विभाग को पत्र प्रेषित किया जाता है तथा परिवादी की संतुष्टि के आधार पर या विभाग द्वारा, ठोस आधार दिये जाने के कारण उससे पुष्टिकारण भी प्राप्त किया जाता है। यह समस्त कार्यवाही सुनिश्चित कर लेने के बाद ही परिवाद को पूर्ण संतुष्टि के आधार पर, निस्तारित पाते हुए निक्षेप किये जाने की कार्यवाही की जाती है।

लोक आयुक्त प्रशासन में अन्वेषण के लिये प्राप्त अभिकथनों के सम्बन्धों में अपनायी जाने वाली प्रक्रिया धारा 10, मध्य प्रदेश लोक आयुक्त एवं उप लोक आयुक्त अधिनियम 1975 में वर्णित है। उसमें अन्वेषण इकाई द्वारा यह परीक्षण किया जाता है कि परिवाद की विषयवस्तु लोक आयुक्त के क्षेत्राधिकार में है अथवा नहीं, परिवादी द्वरा विहित प्रारूप पर शपथ पत्र के साथ परिवाद पत्र प्रस्तुत किया गया है और अन्य वांछित औपचारिकतायें, यथा प्रतिभूति जमा करना आदि पूरी की गयी हैं या नहीं, अन्वेषण के लिये पर्याप्त आधार हैं या नहीं, और परिवादी के लिये मामले की परिस्थितियों को देखते हुए अन्य कोई अधिक प्रभावकारी और उपयुक्त उपचार प्राप्त हो सकता है या नहीं।

यदि इन बिन्दुओं के परीक्षण के बाद लोक आयुक्त का समाधान हो जाता है कि परिवाद अन्वेषण किये जाने योग्य है तब परिवाद अन्तिम अन्वेषण के लिये धारा 10 (1) (क) के अन्तर्गत ग्रहण कर लिया जाता है और परिवाद की प्रति उसके समर्थन में परिवादी द्वारा दिये गये दस्तावेजों की प्रति सहित आरोपी लोक सेवक को प्रेषित करके उनसे उस पर बिन्दुवार उत्तर प्राप्त किया जाता है, परिवाद की प्रति सक्षम प्राधिकारी, (मुख्य सचिव/मा.मुख्य मंत्री) को भी प्रेषित की जाती है। आरोपी का उत्तर प्राप्त होने के पश्चात उसकी प्रति परिवादी को प्रत्युत्तर प्रस्तुत करने के लिये उपलब्ध करायी जाती है। आरोपी का उत्तर प्राप्त हो जाने के बाद यदि और किसी साक्ष्य की आवश्यकता होती है तो सम्बधित पक्ष या सम्बन्धित शासकीय विभाग जहाँ से साक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है से अभिलेख व सुचनायें प्राप्त की जाती हैं और सम्पूर्ण साक्ष्य प्राप्त हो जाने के बाद मामले के गुण दोष के आधार पर विवेचना करके अन्वेषण इकाई द्वारा रिपोर्ट तैयार की जाती है। इस अधिनियम के उपबन्धों के अधीन रहते हुए और परिवाद पर जिसमें तदर्थ की गई शिकायत या अभिकथन सन्निहित हो। लोकायुक्त किसी ऐसी कार्यवाही का अन्वेषण कर सकेगा जो किसी मंत्री अथवा सचिव और धारा 2 के खण्ड (ञ) के उपखण्ड (2) या (4) में निर्दिष्ट किसी लोक सेवक या राज्य सरकार द्वारा लोक आयुक्त के परामर्श से किसी अधिसूचित लोक सेवकों के किसी वर्ग या उपवर्ग के किसी अन्य लोक सेवक के द्वारा या सामान्य विशिष्ट अनुमोदन से की गई हो।

DOI: 10.48175/IJARSCT-8634

इस अधिनियम के उपबन्धों के अधीन रहते हुए और परिवाद पर जिसमें तदर्थ की गई शिकायत या अभिकथन सन्निहित हो। कोई उपलोकायुक्त किसी भी ऐसी कार्यवाही का अन्वेषण कर सकेगा, जो मंत्री, सचिव अथवा उपधारा (1) में निर्दिष्ट अन्य लोकसेवक से भिन्न किसी अन्य लोक सेवक के द्वारा या सामान्य अथवा विशिष्ट अनुमोदन से की गई हो। उपधारा (2) में किसी बात के होते हुए भी लोकायुक्त लेखबद्ध किसे जाने वाले कारणों से किन्हीं भी ऐसी कार्यवाही का अन्वेषण कर सकेगा, जिसका अन्वेषण उस उपधारा के अधीन उपलोकायुक्त कर सकता है।

इस अधिनियम के अधीन यदि दो या अधिक उपलोकायुक्त नियुक्त किये जाय तो लोकायुक्त, सामान्य या विशेष आदेश द्वारा उनमें से प्रत्येक को ऐसे मामलें सौंप सकेगा, जिसका अन्वेषण इस अधिनियम के अधीन उनके द्वारा किया जा सकेगा। प्रतिबन्ध यह है कि इस अधिनियम के अधीन किसी उप लोकायुक्त द्वारा किये गये अन्वेषण और ऐसे अन्वेषण के सम्बन्ध में उसके द्वारा की गई किसी भी कार्यवाही या किये गये कार्य के केवल इस आधार पर आपत्ति नहीं उठाई जायेगी कि ऐसा अन्वेषण ऐसे मामले के सम्बन्ध में है, जो ऐसे आदेश द्वारा उसे नहीं सौंपा गया है।

संदर्भ स्रोतः

[1]. Sawer, Geoffry, Ombudsman (1986) Second ed. उद्धुत झा, रजनी रंजन 'ओम्बुड्समैन संस्था का विकास' लोकतंत्र समीक्षा, वर्ष–14 अंक 1–2 (जनवरी–जून) पृ0 180

[2]. Adams John Clark, "In Quest of Ombudsman in the Mediterranean Area" the Annals of the American Academy of Political and Social Science, Vol. 377 (May-1968) P. 97-103

[3]. Bexclius, Alfered, "The origin Nature and function of the Civil and Military Ombudsman in Sweden"-P- 11 Quoted in Jha Rajani Ranjan, op-cit-p-181

[4]. Wennergren, Bertil, "The Rise and Growth of sweedish Insitutions for defending the Gitizens agains officails worngs" pp-6-7, Quated in Jha Rajani Ranjan.

[5]. Dhawan, R.K. "Public Grievances and the Lokpal", New Delhi, Allied Publisher, (19814)p. 169

[6]. A Person who acts as a spokesman or representive of another person or persons". See- Sharma, Gridhan, B., Implementation Ombudsman Plan in India. New Delhi, Ashish Public lishing House (1981) p-6